जैन हिन्दी-पूजा-काव्य में अष्टद्रव्य और उनका प्रतीकार्थ

डॉ० आदित्य प्रचण्डिया 'दीति'

पूजनं इति पूजा। पूजा शब्द 'पूज' धातु से बना है जिसका अर्थ है अर्चन करना।[1] जैन शास्त्रों में सेवा-सत्कार को वैयावृत्य कहा है तथा पूजा को वैयावृत्य माना है। देवाधिदेव चरणों की वंदना ही पूजा है।[2]

जैन धर्मानुसार पूजा-विधान को दो रूपों में विभाजित किया जा सकता है[3] यथा—

(क) भाव पूजा

(ख) द्रव्य पूजा

मूल में भाव पूजा का ही प्रचलन रहा है। कालान्तर में द्रव्यरूपा का प्रचलन हुआ है। द्रव्यरूपा में आराध्य के स्थापन की परिकल्पना की जाती है और उसकी उपासना भी द्रव्यरूप में हुआ करती है। जैन दर्शन कर्म प्रधान है। समग्र कर्म-कुल को यहां आठ भागों में विभाजित किया गया है। इन्हीं के आधार पर अष्टद्रव्यों की कल्पना स्थिर हुई है।[4]

जैन-धर्म में पूजा-सामग्री को अर्घ्य कहा गया है। वस्तुतः पूजा द्रव्य के सम्मिश्रण को अर्घ्य कहते हैं। जैनेतर लोक में इसे प्रभु के लिए भोग लगाना कहते हैं। भोग्य सामग्री का प्रसाद रूप में सेवन किया जाता है पर जिन वाणी में इसका भिन्न अभिप्राय है। जैन पूजा में अर्घ्य निर्माल्य होता है। वह तो जन्म जरादि कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्ति के लिए शुभ संकल्प का प्रतीक होता है।[5] अतएव अर्घ्य सर्वथा अखाद्य होता है। जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में इस कल्पना का मौलिक रूप सुरक्षित है।

जैन भक्ति में पूजा का विधान अष्टद्रव्यों से किया गया है। पूजा काव्य में प्रयुक्त अष्टद्रव्य अग्रांकित हैं—यथा—१. जल, २. चन्दन, ३. अक्षत, ४. पुष्प, ५. नैवेद्य, ६. दीप, ७. धूप, ८. फल। इन द्रव्यों का क्षेपण अलग-अलग अष्ट फलों की प्राप्ति के लिए शुभ संकल्प रूप है। यहाँ पर इन्हीं अष्ट द्रव्यों का विवेचन करना हमारा मूलाभिप्रेत है।

जल—'जायते' इति 'ज', 'जीयते' इति 'ज' तथा 'लीयते' इति 'ल'। 'ज' का अर्थ जन्म, 'ल' का अर्थ लीन। इस प्रकार 'ज' तथा 'ल' के योग से जल शब्द निष्पन्न हुआ जिसका अर्थ है—जन्म मरण।

लौकिक जगत् में 'जल' का अर्थ पानी है तथा ऐहिक तृषा की तृप्ति हेतु व्यवहृत है। जैन दर्शन में 'जल' का अर्थ महत्त्वपूर्ण है तथा उसका प्रयोग एक विशेष अभिप्राय के लिए किया जाता है। पूजा प्रसंग में जन्म, जरा, मृत्यु के विनाशार्थ प्रासुक जल का अर्घ्य आवश्यक है। जैन-हिन्दी-पूजा में अनंत ज्ञानी तथा अनंत शक्तिशाली, जन्म, जरा, मृत्यु से परे, स्वयं मुक्त तथा मुक्ति मार्ग के निर्देशक महान्

---

१. राजेन्द्र अभिधानकोश, भाग ४, पृ० १०७३

२. देवाधिदेव चरणे परिचरणं सर्वदुःख निर्हरणम्।
कामदुहिकामदाहिव परिचिनुयादाइतो नित्यम॥
समीचीन धर्मशास्त्र, सम्पादक आचार्य समन्त भद्र, वीर सेवा मंदिर, दिल्ली, पृ० १५५, श्लोक संख्या, ५/२९

३. हिन्दी का जैन पूजा काव्य, डा० महेन्द्र सागर प्रचण्डिया, संगृहीत ग्रंथ—भारतवाणी, तृतीय जिल्द, एशिया पब्लिशिंग हाउस, ७-न्यूयार्क, पृ० ५९८

४. जैन कवियों द्वारा रचित हिन्दी पूजा काव्य की परम्परा और उसका आलोचनात्मक अध्ययन, आदित्य प्रचण्डिया 'दीति', आगरा विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत पी-एच०डी० का शोधप्रबन्ध, सन् १९७८, पृ० १८४

५. सागार धर्मामृत, आशाधर, प्रकाशक—मूलचंद किसनदास कापड़िया, सूरत, प्रथम संस्करण वीर सं० २४४१, पृ० १०१, श्लोक सं० ३०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परमात्मा की अपने आत्मा पर लगे कर्म फल को साफ़ करने के लिए पूजा में जल का उपयोग किया जाता है।[1]

जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में इस शब्द का प्रयोग इसी अर्थ-व्यञ्जना में हुआ है। अठारहवीं शती के पूजा कवि द्यानतराय ने 'श्री देवशास्त्र गुरू पूजा' नामक रचना में 'जल' शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में सफलतापूर्वक किया है।[2]

उन्नीसवीं शती के कविवर वृन्दावन द्वारा रचित 'श्री वासुपूज्य जिन पूजा' नामक कृति में जल शब्द का प्रयोग द्रष्टव्य है।[3]

बीसवीं शती के पूजाकार राजमलपवैया विरचित 'श्री पंचपरमेष्ठी पूजन' नामक काव्य कृति में 'जल' शब्द इसी अर्थ की स्थापना करता है।[4]

चन्दन—'चदि आल्हदपने' धातु से चन्दयति अह्लादयति इति चन्दनम्। लौकिक जगत् में चंदन एक वृक्ष है जिसकी लकड़ी के लेपन का प्रयोग ऐहिक शीतलता के लिए किया जाता है। जैन दर्शन में 'चन्दन' शब्द प्रतीकार्थ है। वह सांसारिक ताप को शीतल करने के अर्थ में प्रयुक्त है।[5] जैन-हिन्दी-पूजा में सम्पूर्ण मोह रूपी अंधकार को दूर करने के लिए परम शान्त वीतराग स्वभावयुक्त जिनेन्द्र भगवान की केशर-चन्दन से पूजा की जाती है। परिणामस्वरूप हार्दिक कठोरता, कोमलता और विनयप्रियता में परिवर्तित होकर प्रकट हों। ऐसी अवस्था प्राप्त होने पर भक्त के लिए सम्यग् दर्शन का सन्मार्ग प्रशस्त हो सकेगा।[6]

जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में चन्दन शब्द का प्रयोग उक्त अर्थ में हुआ है। १८ वीं शती के कवि द्यानतराय रचित 'श्री नंदीश्वर द्वीप पूजा' नामक रचना में चन्दन शब्द का व्यवहार परिलक्षित है।[7]

उन्नीसवीं शती के पूजा कवि रामचन्द्र प्रणीत 'श्री अनंतनाथ जिन पूजा' नामक पूजा कृति में 'चंदन' शब्द उल्लिखित है।[8] बीसवीं शती के पूजा काव्य के रचयिता सेवक ने 'चंदन' शब्द का प्रयोग 'श्री आदिनाथ जिन पूजा' नामक पूजा रचना में इसी अभिप्राय से सफलता-पूर्वक किया है।[9]

अक्षत—न क्षतं अक्षतं। अक्षत शब्द अक्षय पद अर्थात् मोक्ष पद का प्रतीक है। अक्षत का शाब्दिक अर्थ है वह तत्त्व जिसकी क्षति न हो। अक्षत का क्षेपण कर भक्त अक्षय पद की प्राप्ति कर सकता है।

जिस प्रकार अक्षत या चावल में उत्पाद-व्यय रूप समाप्त हो जाता है उसी प्रकार जीवात्मा भी रत्नत्रय[10] का पालन करता हुआ अक्षत द्रव्य का क्षेपण कर आवागमन से मुक्ति या अक्षय पद की प्राप्ति का शुभ संकल्प करता है। प्राकृत ग्रन्थ 'तिलोय पण्णति' में अक्षत शब्द का प्रयोग नहीं करके तंदुल रूप का प्रयोग किया है[11] तथा उसी भाषा का अन्य ग्रंथ 'वसुनंदि श्रावकाचार' में अक्षत शब्द का व्यवहार इसी अर्थ-व्यञ्जना में व्यञ्जित है।[12] जैन हिन्दी पूजा में आत्मा को पूर्ण आनंद का विहार केन्द्र बनाने के लिए परम मंगल भाव युक्त जिनेन्द्र के सामने अक्षत से स्वस्तिक बनाकर भव्यजन चार गतियों (मनुष्य, देव, तिर्यंच, नरक गति) का बोध कराते हैं। स्वस्तिक के ऊपर तीन

---

१. ओउम् ह्रीं परम परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय श्रीमज्जिनेन्द्राय जलं यजामहे स्वाहा।
जिनपूजा का महत्त्व, श्री मोहनलाल पारसान, सार्द्धशताब्दि स्मृति ग्रंथ, सार्द्ध शताब्दी महोत्सव समिति, १३६, काटन स्ट्रीट, कलकत्ता-७, सन् १९६५, पृ० ५४।

२. द्यानतराय, श्री देवशास्त्र गुरू पूजा।

३. श्री वासुपूज्य जिन पूजा, वृंदावन।

४. श्री पंचपरमेष्ठीपूजन, राजमल पवैया।

५. सागार धर्मामृत, ३०-३१, जैनेन्द्र सिद्धान्तकोश, भाग ३, जिनेन्द्रवर्णी, भारतीय ज्ञानपीठ, संवत् २०२९, पृ० ७९

६. सकल मोह तमिस्र विनाशनं,
परम शीतल भावयुतं जिनं।
विनय कुंकुम चंदन दर्शनैः
सहज तत्त्व विकास कृतेऽर्चये।
जिन पूजा का महत्त्व, श्री मोहनलाल पारसान, सार्द्ध शताब्दि स्मृति ग्रंथ, सार्द्ध शताब्दी महोत्सव समिति, १३६, काटन स्ट्रीट, कलकत्ता-७, सन् १९६५, पृ० ५४

७. श्री नंदीश्वर द्वीप पूजा, द्यानतराय।

८. श्री अनंतनाथ जिनपूजा, रामचन्द्र।

९. श्री आदिनाथ जिनपूजा, सेवक।

१०. रत्नत्रय-सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।
तत्त्वार्थसूत्र, प्रथम श्लोक, प्रथम अध्याय, उमास्वामि।

११. तिलोयपण्णति २२४, जैनेन्द्र सिद्धान्तकोश, भाग ३, जिनेन्द्र वर्णी, भारतीय ज्ञानपीठ, २०२९, पृ० ७८

१२. वसुनंदि श्रावकाचार ३२१, जैनेन्द्र सिद्धान्तकोश, भाग ३, जिनेन्द्र वर्णी, भारतीय ज्ञानपीठ, २०२९, पृ० ७८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बिन्दुओं से सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्र का, ऊपर चन्द्र से सिद्धशिला का तथा बिन्दु से सिद्धों का बोध कराते हैं। इस प्रकार सम्यग् दर्शन, ज्ञान, चरित्र ही भव्य जीव को मोक्ष प्राप्त कराते हैं।[1] जैन वाङ्मय में अक्षत से पूजा करने वाले भक्त का मोक्ष प्राप्त हो जाने का कथन प्राप्त होता है।[2]

प्राकृत और अपभ्रंश से होता हुआ 'अक्षत' शब्द अपना यही अर्थ समेटे हुए हिन्दी में भी गृहीत है। जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में १८वीं शती के कवि द्यानतराय प्रणीत 'श्री अथ पंचमेरु पूजा' नामक कृति में अक्षत शब्द उल्लिखित है।[3] उन्नीसवीं शती के पूजाकार मनरंगलाल विरचित 'श्री नेमिनाथ जिन पूजा' नामक रचना में अक्षत शब्द का प्रयोग द्रष्टव्य है।[4] बीसवीं शती के पूजा काव्य के प्रणेता कुंजिलाल विरचित 'श्री पार्श्वनाथ जिन पूजा' नामक कृति में अक्षत शब्द का व्यवहार इसी अभिप्राय से हुआ है।[5]

पुष्प—पुष्यति विकसति इह पुष्प :। पुष्प कामदेव का प्रतीक है। लोक में इसका प्रचुर प्रयोग देखा जाता है। जैन काव्य में पुष्प का प्रतीकार्थ है। पुष्प समग्र ऐहिक वासनाओं के विसर्जन का प्रतीक है। पुष्प से पूजा करने वाला कामदेव सदृश देह वाला होता है तथा इसके क्षेपण में सुन्दर देह तथा पुष्पमाला की प्राप्ति का उल्लेख मिलता है।[6] संस्कृत, प्राकृत वाङ्मय में पुष्प शब्द के प्रतीकार्थ की परम्परा हिन्दी जैन काव्य में भी सुरक्षित है। यहां पुष्प कामनाओं के विसर्जन के लिए पूजा काव्य में गृहीत है।

जैन-हिन्दी-पूजा में खिले हुए सुन्दर सुगन्ध युक्त पुष्पों से केवलज्ञानी जिनेन्द्र भगवान् की पूजा कर मन-मंदिर को प्रसन्नता से खिला दो। मन पवित्र-निर्मल बन जाने से ज्ञान-चक्षु खुल जाएंगे व विशुद्ध चेतन स्वभाव प्रकट होगा जिससे अनुभव रूपी पुष्पों से आत्मा सुवासित हो जाएगा।[7] जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में १८वीं शती के पूजा कवि द्यानतराय प्रणीत 'श्री चारित्र पूजा' नामक रचना में पुष्प शब्द इसी अर्थ-व्यञ्जना में व्यवहृत है।[8] उन्नीसवीं शती के पूजा कवि बख्तावररत्न प्रणीत 'श्री पार्श्वनाथ जिन पूजा' नामक पूजा कृति में पुष्प शब्द उक्त अर्थ में प्रयुक्त है।[9] बीसवीं शती के पूजा रचयिता हीराचंद रचित 'श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समुच्चय पूजा' में पुष्प शब्द का प्रयोग द्रष्टव्य है।[10]

नैवेद्य—निश्चयेन वेद्यं गृठ्ठी यम क्षुधा निवारणाय। नैवेद्य वह खाद्य पदार्थ है जो देवता पर चढ़ाया जाता है।[11] किन्तु जैन

१.

सकल मंगल केलिनिकेतनं,
परम मंगल भावमयं जिनं।
श्रयति भव्यजनाइति दर्शयन्,
दधतुनाथ पुरोऽक्षत स्वस्तिकं॥
जिनपूजा का महत्त्व, श्री मोहनलाल पारसान, सार्द्ध शताब्दि स्मृति ग्रंथ, प्रकाशक—सार्द्ध शताब्दि महोत्सव समिति, १३६, काटन स्ट्रीट, कलकत्ता-७, सन् १९६५, पृ० ५५

२. वसुनंदि श्रावकाचार, ३२१, जैनेन्द्र सिद्धान्तकोश, भाग ३, जिनेन्द्रवर्णी, भारतीय ज्ञानपीठ, २०२६, पृ० ७८
३. श्री अथ पंच मेरुपूजा, द्यानतराय।
४. श्री नेमिनाथ जिनपूजा, मनरंगलाल।
५. श्री पार्श्वनाथ जिनपूजा, कुंजिलाल।
६. वसुनंदि श्रावकाचार, ४८५, जैनेन्द्र सिद्धान्तकोश, भाग ३, जिनेन्द्रवर्णी, भारतीय ज्ञानपीठ, २०२६, पृ० ७८
७. विकच निर्मल शुद्ध मनोरमैः,
विशद चेतन भाव समुद्भवैः।
सुपरिणाम प्रसून धनैर्नवैः,
परम तत्त्वमयं हियजाम्यहं॥
जिनपूजा का महत्त्व, श्री मोहनलाल पारसान, सार्द्ध शताब्दि स्मृति ग्रंथ, सार्द्ध शताब्दी महोत्सव समिति, १३६, काटन स्ट्रीट, कलकत्ता-७, सन् १९६५, पृ० ५५
८. श्री रत्नत्रय पूजा, द्यानतराय।
९. श्री पार्श्वनाथ जिनपूजा, बख्तावररत्न।
१०. श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर समुच्चय पूजा, हीराचंद।
११. सागार धर्मामृत ३०-३१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाङ्मय में यह विशेष रूप से प्रतीकार्थ रूप में प्रचलित है। वहां आर्ष ग्रंथों में कान्ति, तेज, सम्पन्नता के लिए यह शब्द व्यवहृत है। जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में क्षुधा रोग को शान्त करने के लिए चढ़ाया गया मिष्ठान्न वस्तुतः नैवेद्य कहलाता है।[1]

जैन-हिन्दी-पूजा में समस्त पुद्गल भोग एवं संयोग से मुक्त होने के लिए अपने सहज आत्म स्वभाव का स्वाद लेते रहने के लिए हे भगवान्! हम सरस भोजन आपके सामने चढ़ाते हैं फलस्वरूप हमें समस्त विषय-वासनाओं, भोग की इच्छा से निवृत्ति प्राप्त हो।[2]

नैवेद्य शब्द अपने इसी अभिप्राय को लेकर जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में अठारहवीं शती के पूजा कवि द्यानतराय प्रणीत 'श्री बीस तीर्थंकर पूजा' नामक रचना में व्यवहृत है।[3] उन्नीसवीं शती के पूजा कवि बख्तावररत्न विरचित 'श्री कुंथुनाथ जिन पूजा' नामक कृति में नैवेद्य शब्द परिलक्षित है।[4] बीसवीं शती के पूजा कवि दौलतराम विरचित 'श्री पावापुर सिद्ध क्षेत्र पूजा' नामक रचना में नैवेद्य शब्द इसी अभिप्राय से व्यवहृत है।[5]

दीप—दीप्यते प्रकाश्यते मोहान्धकारं विनश्यति इति दीर्घ। दीप का अर्थ लोक में 'दिया' प्रकाश का उपकरण विशेष के लिए व्यवहृत है। जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में इस शब्द का प्रयोग प्रतीकार्थ में हुआ है। मोहान्धकार को शान्त करने के लिए दीप रूपी ज्ञान का अर्घ्य आवश्यक है। भवि जीव निर्मल आत्मबोध के विकास के लिए जिन मंदिर में घृत दीपक जलावें फलस्वरूप उनके मन-मंदिर में सद्गुण (अहिंसा, संयम, इच्छारोध तप) रूपी दीप का प्रकाश फैल जाय।[6] पूजा में आवश्यक सामग्री में गोले (नारियल) के श्वेतशकल 'दीप' का प्रतीकार्थ लेकर दीप शब्द प्रयोग में आता है।[7]

अठारहवीं शती के पूजाकार द्यानतराय ने 'श्री निर्वाण क्षेत्र पूजा' नामक पूजा कृति में 'दीप' शब्द का उक्त अर्थ के लिए व्यवहार किया है।[8] उन्नीसवीं शती के पूजा रचयिता मल्ल जी रचित 'श्री क्षमावाणी पूजा' नामक रचना में 'दीप' शब्द इसी अभिप्राय से गृहीत है।[9] बीसवीं शती के पूजाकार भविलालजू कृत 'श्री सिद्ध पूजा भाषा' नामक रचना में 'दीप' शब्द व्यञ्जित है।[10]

धूप—धूप्यते अष्ट कर्माणां विनाशो भवति अनेन अतोधूपः। धूप गन्ध द्रव्यों से मिश्रित एक द्रव्य-विशेष है जो मात्र सुगंधि के लिए अथवा देव-पूजन के लिए जलाया जाता है। जैन दर्शन में यह सुगन्धित द्रव्य 'धूप' शब्द प्रतीकार्थ है तथा पूजा प्रसंग में अष्ट कर्मों का विनाशक माना गया है।

जैन-हिन्दी-पूजा में अशुभ पाप के संग से बचने के लिए समस्त कर्म रूपी ईंधन को जलाने के लिए प्रफुल्लित हृदय से जिनेन्द्र भगवान् की सुगंधित धूप-पूजा की जाती है ताकि शुद्ध संवर रूप आत्मिक शक्ति का विकास हो जिससे कर्मबंध रुक जाएं।[11]

---

१. वसुनंदि श्रावकाचार, ४८६

२. सकल पुद्गल संग विवर्जनं,
सहज चेतन भाव विलासकं।
सरस भोजन नव्य निवेदनात्,
परम तत्त्वमयं हियजाम्यहं॥
जिनपूजा का महत्त्व, श्री मोहनलाल पारसान, सार्द्ध शताब्दी स्मृति ग्रंथ, पृ० ५५

३. श्री बीस तीर्थंकर पूजा, द्यानतराय।

४. श्री कुंथुनाथ जिनपूजा, बख्तावररत्न।

५. श्री पावापुर सिद्ध क्षेत्र पूजा, दौलतराम।

६. भविक निर्मल बोध विकाशकं,
जिनगृहे शुभ दीपक दीपनं।
सुगुण राग विशुद्ध समन्वितं,
दधतुभाव विकाशकृते जनाः।
जिनपूजा का महत्त्व, श्री मोहनलाल पारसान, सार्द्ध शताब्दि स्मृति ग्रंथ, पृ० ५५

७. सागारधर्मामृत—३०-३१

८. श्री निर्वाण क्षेत्र पूजा, द्यानतराय।

९. श्री क्षमावाणीपूजा, मल्लजी।

१०. श्री सिद्धपूजा भाषा, भविलालजू।

११. सकल कर्म्म महेधन दाहनं,
विमल संवर भाव सुधूपनं।
अशुभ पुद्गल संग विवर्जितं,
जिनपतेः पुरतोऽस्तुसुहर्षितः॥
जिनपूजा का महत्त्व, श्री मोहनलाल पारसान, सार्द्ध शताब्दि स्मृति ग्रंथ, पृ० ५५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में अठारहवीं शती के पूजाकार द्यानतराय प्रणीत 'श्री रत्नत्रय पूजा' नामक रचना में 'धूप' शब्द का उल्लेख मिलता है।[1] उन्नीसवीं शती के पूजा कवि कमलनयन प्रणीत 'श्री पंचकल्याणक पूजा पाठ' नामक कृति में 'धूप' शब्द का व्यवहार दृष्टिगोचर होता है।[2] बीसवीं शती के पूजा रचयिता जिनेश्वर दास विरचित 'श्री चन्द्र प्रभु पूजा' नामक रचना में 'धूप' शब्द इसी आशय से गृहीत है।[3]

फल — फलं मोक्षं प्रापयति इति फलम्। फल का लौकिक अर्थ परिणाम है। जैन धर्म में फल शब्द का प्रयोग विशेष अर्थ में हुआ है। पूजा प्रसंग में मोक्ष पद को प्राप्त करने के लिए क्षेपण किया गया द्रव्य वस्तुतः फल कहलाता है।[4]

जैन-हिन्दी-पूजा में दुःखदायी कर्म के फल को नाश करने के लिए मोक्ष का बोध देने वाले वीतराग प्रभो के आगे सरस, पके फल चढ़ाते हैं फलस्वरूप भक्त को आत्मसिद्धि रूप मोक्ष फल प्राप्त हो।[5]

जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य में अठारहवीं शती के पूजा कवि द्यानतराय ने फल शब्द का व्यवहार 'श्री सोलह कारण पूजा' नामक रचना में किया है।[6] उन्नीसवीं शती के पूजाकार मल्लजी रचित 'श्री क्षमावाणी पूजा' नामक रचना में फल शब्द उक्त अभिप्राय से अभिव्यक्त है।[7] बीसवीं शती के पूजा प्रणेता युगल किशोर 'युगल' द्वारा विरचित 'श्री देवशास्त्र गुरु पूजा' नामक रचना में फल शब्द का प्रयोग इसी अर्थ-व्यञ्जना में हुआ है।[8]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जैन भक्त्यात्मक प्रसंग में पूजा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। द्रव्य पूजा में अष्ट द्रव्यों का उपयोग असंदिग्ध है। यहां इन सभी द्रव्यों में जिस अर्थ अभिप्राय को व्यक्त किया गया है, हिन्दी-जैन-पूजा-काव्य में वह विभिन्न शताब्दियों के रचयिताओं द्वारा सफलतापूर्वक व्यवहृत है। जैन-हिन्दी-पूजा-काव्य मूल रूप में प्रवृत्ति से निवृत्ति का संदेश देता है साथ ही भक्त को सन्मार्ग पर चलने के लिए प्रेरणा देता है।

बौद्ध धर्म में बोधचित्तोत्पाद के बिना कोई व्यक्ति बोधिसत्त्व की चर्या अर्थात् शिक्षा ग्रहण का अधिकारी नहीं होता। बोधिचित्त-ग्रहण के लिए सबसे पहले बुद्ध, सद्धर्म तथा बोधिसत्त्वगण की पूजा आवश्यक है। यह पूजा मनोमय पूजा है। शान्तिदेव मनोमय पूजा का हेतु देते हैं :

अपुण्यवानस्मि महादरिद्र: पूजार्थमन्यन्मम नास्ति किञ्चित्।
अतो ममार्थाय परार्थचित्ता गृहन्तु नाथा इदमात्मशक्त्या। बोधि० परि० २, ६

अर्थात् मैंने पुण्य नहीं किया है, मैं महादरिद्र हूँ, इसीलिए पूजा की कोई सामग्री मेरे पास नहीं है। भगवान् महाकारुणिक हैं, सर्वभूत-हित में रत हैं। अत: इस पूजोपकरण को नाथ ! ग्रहण करें। अकिंचन होने के कारण आकाशधातु का जहां तक विस्तार है, तत्पर्यन्त निखशेष पुष्प, फल, भैषज्य, रत्न, जल, रत्नमय पर्वत, वन-प्रदेश, पुष्पलता, वृक्ष, कल्पवृक्ष, मनोहर तटाक तथा जितनी अन्य उपहार वस्तुएँ प्राप्त हैं, उन सबको बुद्धों तथा बोधिसत्वों के प्रति वह दान करता है, यही अनुत्तर दक्षिणा है। यद्यपि वह अकिंचन है, पर आत्मभाव उसकी निज की सम्पत्ति है, उस पर उसका स्वामित्व है। इसलिए वह बुद्ध को आत्मभाव समर्पण करता है। भक्तिभाव से प्रेरित होकर वह दासभाव स्वीकार करता है। भगवान् के आश्रय में आने से वह निर्भय हो गया है। वह प्रतिज्ञा करता है कि अब मैं प्राणिमात्र का हित साधन करूँगा, पूर्वकृत पाप का अतिक्रमण करूँगा, और फिर पाप न करूँगा।

आचार्य नरेन्द्रदेव कृत बौद्ध-धर्म-दर्शन, पृ० १८६-१८७ से साभार

---

१. श्री रत्नत्रयपूजा, द्यानतराय।
२. श्री पंचकल्याणक पूजा पाठ, कमलनयन।
३. श्री चंद्रप्रभुपूजा, जिनेश्वरदास।
४. वसुनंदि श्रावकाचार, ४८८
५. कटुककर्मविपाकविनाशनं,
सरस पक्वफल व्रज ढौकनं।
वहति मोक्षफलस्य प्रभोःपुर,
कुरुत सिद्धिफलाय महाजना॥
जिनपूजा का महत्त्व, श्री मोहनलाल पारसान, सार्द्ध शताब्दी स्मृति ग्रंथ, पृ० ५५
६. श्री सोलहकारणपूजा, द्यानतराय।
७. श्री क्षमावाणीपूजा, मल्लजी।
८. श्री देवशास्त्र गुरुपूजा, युगलकिशोर 'युगल'।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org